International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 06-06-2022, Accepted: 23-06-2022, Published: 09-07-2022
Volume 8, Issue 4, 2022, Page No. 21-23

पथरीला सोनाः प्रवासी भारतीयों के इतिहासबोध और पीड़ाबोध का आख्यान

विनोद कुमार बी एम
सहायक प्राध्यापक, आल्वास कॉलेज मूडूविरे, दक्षिण कन्नड़ ,कर्नाटक ,भारत

सारांश
संवेदना साहित्य सृजन का आधार है। साहित्यकार की संवेदना ही उसे सृजन के लिए प्रेरित करती है । संवेदना को गहनता से महसूस करना और उसे शब्दों के माध्यम से रूपायित कर देना ही साहित्य की उपलब्धि है। इस दृष्टि से रामदेव धुरंधर द्वारा रचित पथरीला सोना हिन्दी साहित्य की विशिष्ट कृत्ति है पथरीला सोना के माध्यम से रामदेव धुरंधर ने प्रवासियों की पीड़ा और वेदना को बहुत ही भावपूर्ण ढंग से हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है। भावनात्मकता और आक्रोश जो समन्वय इस उपन्यास में सर्वत्र देखने को मिलता है । पथरीला सोना में लेखक ने कुदाल से कलम तक की यात्रा को जीवन्त रूप में प्रस्तुत किया है । रचनाधर्मिता के प्रति प्रतिबद्ध होना रामदेव की अन्यतम विशेषता है । इस उपन्यास में कथाकार का व्यक्तिगत जीवन विषय वस्तु के साथ घुल–मिलकर कथा फलक पर उभरा है। जो कुछ भी देखा ,भोगा और जीया उसे जस का तस हमारे समक्ष प्रस्तुत कर दिया है।

मूल शब्दः संवेदना, भावनात्मकता, पथरीला सोना, वैष्विकय, प्रवासिया

प्रस्तावना
वर्तमान समय में वैष्विक स्तर पर हिन्दी भाषा में अध्ययन अध्यापन के साथ जीवन के विविध क्षेत्रों में हो रहा है। वैष्विक स्तर पर हिन्दी को पहचान दिलाने का श्रेय हिन्दी क्षेत्र के प्रवासियों को है, जिन्होने अपने परिवेष, माटी और भाषा के प्रति अपना अनुराग अनेकों वर्षों के प्रवास के बाद भी बनाये रखा है। आज हिन्दी जिस रूप में भारत और भारत के बाहर में बोली और समझी जा रही है, उस रूप में हिन्दी को ढालने का कार्य भारतेन्दु हरिष्चन्द्र ने किया। खड़ी बोली हिन्दी को हिन्दी भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए भारतेन्दु हरिष्चन्द्र ने अपनी पुस्तक कालचक्र (1873) में लिखा है– 'हिन्दी नई चाल में ढली।' यहॉ से हिन्दी भाषा को एक नया आकार मिला। हिन्दी भाषा के साथ–साथ हिन्दी साहित्य में भी वैविध्यपूर्ण लेखन आरम्भ हुए।
साहित्यिक धरातल पर हिन्दी में अब तक बहुतायत मात्रा में काव्य लेख नही हो रहा था लेकिन आधुनिक काल में काव्य लेखन को साथ–साथ साहित्य की अन्य विधाओं में भी लेखन आरम्भ हुआ। निबन्ध, नाटक, कहानी, उपन्यास के साथ–साथ उन्या प्रकीर्ण विधाओं में लेखन का आरम्भ हुआ, जिसका विकास परवर्ती कालों में देखा जा सकता है। हिन्दी भाषा ओर साहित्य को विविध साहित्यिक विधाओं के माध्यम से जीवन और जगत का व्यापक संस्पर्ष मिला। हिन्दी के कथाकारों ने व्यापक सामाजिक यथार्थ के अंकन की दिषा में महत्वपूर्ण कार्य किया।
हिन्दी साहित्य की आधुनिक विधाओं में उपन्यास साहितय को व्यापक यथार्थ का संस्पर्ष मिला हुआ है। भाव, भाषा एवं षिल्प सभी दृष्टियों से हिन्दी उपन्यास साहित्य में विविधता देखने को मिलती है। आधुनिक काल में खड़ी बोली हिन्दी के साहित्यिक रूप की प्रतिष्ठा के साथ–साथ साहित्य की विविध–विधाओं में लेखन आरम्भ हुआ। इसमें सबसे व्यापक आधार उपन्यास साहित्य को मिला। उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द ने व्यापक सामाजिक यथार्थ को आधार बनाकर कथा साहित्य लेखन का कार्य किया। हिन्दी कथा साहित्य को भाव एवं भाषा दोनों स्तरों पर सहजता प्रदान करने की दिषा में प्रेमचन्द का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रेमचन्द सामाजिक यथार्थ को जस का तस प्रस्तुत करने वाले कथाकार हैं। इसी कारण उन्हें उपन्यास सम्राट भी कहा जाता है। हिन्दी साहित्य के परवर्ती सभी उपन्यासकार किसी न किसी रूप में प्रेमचन्द से अवश्य प्रभावित हुए।
सामाजिक यथार्थ के अंकन की जिस परम्परा का आरम्भ प्रेमचन्द ने किया था, उसे आगे ले जाने का कार्य हिन्दी के अनेक कथाकारों ने किया। इस परम्परा में – यशपाल, अमृतलाल नागर, चतुरसेनषास्त्री, वृन्दावनलालवर्मा, षिवपूजन सहाय, विष्वंभनाथ शर्मा कौषिक, आदि ने किया। भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के समय और स्वाधीनता के बाद खड़ी बोली हिन्दी के अपने वैष्विक पहचान मिली। हिन्दी भाषा के इस वैष्विक प्रसार में भारत के श्रमिकों और उन लोगों का विषेष योगदान रहा जिन्होंने प्रवासी होकर भी अपनी भाषा और संस्कृति का साथ नहीं छोड़ा। दुनिया ने कोने–कोने में पीढ़ीयों से बसे भारतीयों का अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति अनुराग देखते ही बनता है। इन प्रवासियों द्वारा हिन्दी साहित्य को भी समृद्धि प्रदान करने की दिषा में विषेष कार्य किया गया।
रामदेव धुरंधर जीवन जगत की वास्तविकताओं को यथातथ्य प्रस्तुत वाले विशिष्ट रचनाकार हैं। भारतीय सांस्कृतिक परम्परा के संवाहक के रूप में प्रवासी भारतीयों के योगार को भूलना संभव नहीं हैं। इसी परम्परा में रामदेव धुरंधर जी ने अपने लेखन के माध्यम से प्रवासी जीवन के यथार्थ और संघर्षों को बखूबी अपने कथा फलक पर उभारा है। आपका रचना संसार व्यापक ओर विस्तृत है।
उनकी प्रकाशित कृतियॉ हैं। चेहरों का आदमी, छोटी मछली–बड़ी मछली, पूछो इस माटी से, बनते–बिगड़ते रिश्ते, पथरीला सोना (उपन्यास), विष–मंथन, जन्म की एक भूल (कहानी) कलजुगी धरम, चेहरों के झमेले, पापी स्वर्ग, बंदे आगे

भी देख (व्यंग्य संग्रह) चेहरे मेरे तुम्हारे, यात्रा साथ–साथ, एक धरती एक आकाष, आते–जाते लोग (लधु कथा संग्रह) आदि ऋषि और भगवान, आह्वान, कहीं–अनकहीं, चंदनी स्पर्ष, मेरा वह महात्मा, रिहा, सत्जुग भी, कल्जुग भी, सोना और सोनी, हम दोनों (लोक कथा संग्रह)। रामदेव धुरंधर जी का जीवनानुभव उनके साहित्य में प्रतिबिम्बित होता है। उनके साहित्यिक योगदानों के लिए उन्हें हिन्दी भाषा उन्नयन सम्मान (सरोज संध मारिशस), दुष्यंत कुमार स्मारक सम्मान (दुष्यंत कुमार संग्राहालय भोपाल), विश्व हिन्दी रत्न (आधाशीला विष्व हिन्दी मिशन, नैनीताल), हजारी प्रसाद द्विवेदी सम्मान (आधारशिला प्रकाशन, नैनीताल) मिला है।

इसके अतिरिक्त आपके लेख एवं रचनायें वैश्विक स्त्तर की पत्र–पत्रिकाओं में भी प्रकाषित होते रहे हैं। पथरीला सोना आपके द्वारा रचित विशिष्ट उपन्यास है, जिसमें प्रवासी मजदूरों की संघर्ष गाथा को बहुत ही तल्ख रूप में उभारा गया है। गहन और दीर्घ रात के अँधेरे से उभरती जीवन की स्थितियों का अंकन इस उपन्यास की विषेषता है। संवेदना, पीड़ा, करूणा, के गहनतर स्तरों को जीने ओर उस अनुभूति को संजोने की दृष्टि से यह कृत्ति अन्यतम है। 180 वर्षों के परिवर्तन को समग्रता में प्रस्तुत करना कठिन रचनाधर्म था, जिसे रामदेव धुरंधर जी ने बखूबी निभाया है। बिना अपने स्वास्थ्य की परवाह किये आपने 180 बर्षो की यात्रा को संजोना अपने आप में विशिष्ट है। आपने पथरीला सोना की भूमिका में लिखा है– मेरी पत्नी देवरानी पथरीला सोना उपन्यास मेरे लेखन की एक खास गवाह है। उसका सहयोग मुझे न मिलता तो सायद मैं अपने मारिसस के 180 वर्षों की साहित्यिक यात्रा में अपने को इतनी व्यापकता में समर्पित ना कर पाता। रात को वह जब भी जगी तो मुझे लिखते ही देखा। मेरे स्वास्थ्य को लेकर उसे बहुत चिन्ता हो गई थी। मैं अपनी पत्नी के कटघरे को स्वाकार करता हूँ, इस कृति में बार–बार, बर्षों आद्यंत लगकर मैंने अपने सवास्थ्य का बहुत क्षय किया है। वह हर हाल में चाहती थीं मैं इससे मुक्त होंऊ, पर मैं जानता हूँ न तब भी मेरी मुक्ति थी, और न आज मेरी मुक्ति है।

अपनी रचना धर्मिता के प्रति इतनी प्रतिबद्धता विरले ही देखने को मिलती है। रचना धर्मिता के प्रति अपनी इसी सजगता और समर्पण के कारण आपका यह उपन्यास इतना विषिष्ट बन पड़ा है। जो देष अपने सीने पर पत्थरों का बोझ उगाये निस्पंद पड़ा हुआ था, भारतीयों ने कुदाल से स्पंदित किया ओर इसके माथे पर लिखा तुम्हें उर्वर होना है।

रामदेव धुरंधर द्वारा रचित पथरीला सोना (छह खण्ड) उपन्यास संघर्षों की एक महागाथा है। इस उपन्यास में 1834 से 2014 तक के लम्बे काल खण्ड के संघर्ष, पीड़ा और यथार्थ का चित्र देखने को मिलता है। उपन्यासकार स्वयं उस संघर्ष का हिस्सा रहा है इसी कारण कथा में व्यापक मार्मिकता और यथार्थ की धार देखने को मिलती है। उपन्यास के आरम्भ में अपना समर्पण प्रेषित करते हुए कथाकार ने जो पंक्तियॉ लिखी है, उससे ही पाठक या आस्वादक औपन्यासिक यथार्थ के ताप को महसूस कर सकता है–

'उन भारतीय मजदूरों का समर्पित, जिनकी कुदाल से मॉरिषस की अनछूई धरती पहली बार स्पंदित हुई थी।'[1] यह पंक्तियॉ सहृदय को अन्दर तक स्पंदित करने वाली है। उपने लेखन ओर उसके परिवेष पर चर्चा करते हुए लिखा है कि– मॉरिषस के पूर्वी प्रांत में पड़ने वाले कारोलीन नाम के एक साधारण ग्रामांचल में जन्य पाकर मैं यहीं उम्र की सीढ़ियॉ चढ़ता गया। बाद मं इस जगह को छोड़ने की बाध्यता अनेकाकं बार आई, लेकिन मेरे भीतर एक अमूर्त सा संकल्प निभता चल रहा था कि रहना तो मुझे यहॉ है। मैं यही से दूर–दूर जाकर पढ़ाई करता रहा। यहीं से अन्यत्र जाकर नौकरी की और उपने इसी परिवेष में लौटता रहा।[2]

अपनी भूमि और जन्म स्थान के प्रति ममत्व रामदेव धुरंधर के व्यक्तित्व के साथ–साथ कृतिव में भी देखा जा सकता है। भाव एवं भाषा की दृष्टि से 'पथरीला सोना' आपका विषिष्ट उपन्यास है। भाव एवं भाषा का अद्भूत समन्वय विवेच्य उपन्यास में देखने को मिलता है। भाषा के स्तर पर व्यापक वैविध्य रचनाकार के जीवनानुभव का परिणाम है। धुरंधर जी ने जिस परिवेष का अंकन इस उपन्यास में किया, उव परिवेष के वे स्वयं प्रत्यक्षदर्षी तो थे ही साथ ही साथ उस जीवन को जी भी रहे थे। कथा भाषा अन्य साहित्यिक विधाओं से भिन्न होती है क्योंकि कथा साहित्य में जीवन के व्यापक चित्र और सामाजिक परिवेष को प्रस्तुति प्रदान की जाती है।

कथा साहित्य की भाषा पर विचार करते हुए अज्ञेय ने लिखा है– 'कथा साहित्य में साहित्यिक भाषा का प्रयोग नहीं चल सकता, यह बात तो उपन्यास के विकास के प्रारम्भिक युग में ही स्पष्ट हो गयी थी। लेकिन उस समय इसके निराकरण के लिए जहॉ तहॉ प्रादेषिक भाषाओं को अथवा प्रादेषिक, आंचलिक, जातिगत, व्यवसायगत अथवा वर्गगत शब्दों, मुहावरो और व्याकरणिक विभिन्नताओं को कथोपकथन में ले आना ही पर्याप्त समझा जाता था। जैसे–जैसे उपन्यास के क्षेत्र का विस्तार बढ़ा और कथा में सामाजिक परिवर्तन के सूक्ष्मतर पर्यवेक्षण की प्रवृत्ति बढ़ी वैसे–वैसे यह स्पष्ट होता गया कि ऐसे उपाय बिल्कुल नाकाफी है और समस्या के निवारण में भी महत्वपूर्ण योग दिया ओर उसे सुलझाने के अनेक सूत्र प्रस्तुत किये।[3]

पथरीला सोना में भी एक अंचल के यथार्थ को अभिव्यक्ति प्रदान की है। मॉरीषस एक छोटा सा देष है ओर उस देष में प्रवासी भारतीयों की बहुत बड़ी आबादी है। उस आबादी की पीड़ा एवं जीवन स्थितियों का अंकन उनके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में करते हुए रचनाकार की भाषा भी वैविध्यपूर्ण रूप ग्रहण करती गयी है। पथरीला सोना उपन्यास की भाषा साहित्यिक प्रतिमानों के साथ–साथ सामाकि परिप्रेक्ष्य को भी ध्यान में रखते हुए निर्मित हुई है। उपन्यास के आरम्भ में कथाकार ने लिखा है कि –''जो पक्षी शुरू से लोगों के साथ जहाज में चले आ रहे थे इन पक्षियों की मंजिल कहॉ थी? इन भारतीयों के जीवन –मरण की भाग्य–रेखा जहॉ खींची जा चूकी हो, क्या इन पक्षियों का भी उस जमीन से साक्षा होने वाला था? पर ये तो जहाज के पक्षी थे, इसलिए ये किसी मंजिल के मोहताज नहीं होते। ईष्वर ने इन्हें आकाष में फैलाने के लिए पंख दिये थे ओर धरती के हिसाब से दाना चुगने के लिए चोंच दी थी। जहाज के पंक्षी मॉराषस मे पेड़ों पर अपना घोंसला बना लेता था लौटते हुए जहाज के मस्तूल से लग कर लौट जाते। जबकि इस मजदूरों का बसेरा न पेड़ पर होता और न लौटने के लिए जहाज का मस्तूल होता।''[4]

उपरोक्त पंक्तियों के माध्यम कथाकार ने मजदूरों की नियति को संकेत कर दिया है। भाषा के माध्यम से गहन भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करने की परम्परा हिन्दी उपन्यासों में आरम्भ से ही रही है। लहरों पर दस्तक देती जिन्दगी और उसकी पीड़ा को शब्दद्ध करते हुए धुरंधर जी की भाषा शैली अधिक प्रभावी और तीक्ष्ण हो गयी है। पंक्षियों के पास उड़ने के लिए

आकाष और रहने के लिए घोंसले हैं, लेकिन प्रवासियों की नियति ही कुछ और है। उपन्यास के कथ्य की ओर संकेत किया है। पथरीला सोना एक ऐसा उपन्यास है जिसमें बेघर होने की नियति के मजबूर लोगों की दषा एवं दिषा को प्रस्तुत किया गया है। लेखक जिस परिवेष का भोक्ता और दृष्टा होने के कारण उसकी भाषा में भी परिवेष नीवन्त हो उठता है। घर ओर बाहर के बीच जीवन यापन करना ओर उस पर पराधीनता के बोध का अंकन नये तरह की संवेदना एवं षिल्प की निर्मिति करता है। संवेदना एवं षिल्प की निर्मिति औपन्यासिक कथावस्तु एवं भाषिकी से अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है।

'पथरीला सोना' में पराधीनता के बीच जकड़ी हुई मानवता का तल्ख चित्र प्रस्तुत किया गया है। औपनिवेषिक शासकों की मृत प्राय मनुष्यता निम्नलिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य है– 'जहाज के अधिकारियों के खेमे में मानवता मृत थी और इन भारतीयों के खेमे में मानवता बेबस थी।

समुद्र के ज्वार–भाटे पीछे छूटे। अब लोगों के अपने अंतस में ज्वार भाटे उठने की बारी थी। जहाज में मनमानी और अमानवीयता के कांड तो बहुत रचे गए। अब सामने मं जो दृष्य दिख रहे हैं यह भी संकट, अत्याचार, उत्पीड़न और जाने –अनजाने आतंक के फफोलों से फटे प्रतीत हो रहे हैं।'[5]

मानव मन के भावों में होने वाले आलोड़पन –विलोड़न के अंकन की दृष्टि से यह उपन्यास अपने आप में विषिष्ट है। बेदना और पीड़ा का संगठित रूप इस उपन्यास के माध्यम से धुरंधर जी ने जीवन्त किया है।

पथरीला सोना वास्तव में वह इतिहास है, जिसे भारतीय मजदरों ने भोग और और नए जीवन की आधारशिला रखी। उपन्यास की यात्रा आरम्भ होती है भारत से निकले मजदूरों के प्रवास के आरम्भ से, जो एक अंतहीन यात्रा में परिवर्तित हो जाती है। पीड़ा, वेदना, आक्रोश और बेबसी का घनीभूत रूप इस उपन्यास में देखने को मिलता है। इस उपन्यास को पढ़ते हुए हम उस यथार्थ से साक्षात्कार कर रहे होते हैं, जिसे प्रवासी भारतीयों ने भोगा था। इस विषय को लेकर लिखा जाने वाला यह अद्वितीय उपन्यास है, जिसका लेखक स्वयं भोक्ता भी था। उपन्यास की आरम्भिक पंक्तियों में उस मर्म को हम समझ सकते हैं– दर्द से परेशान उस औरत का पेट देखने की आवाज़ हाँकने वाले जहाज के उस कर्मचारी ने जाल ऐसा बनाया कि औरत पेट न दिखाती तो उसे समुद्र में अब तो फेकना ही होगा।

औरत ने लहंगा उठा कर अपना पेट दिखाया! सारी औरतें चीख पड़ीं।
रवीचन नाम के युवा ने कहा दृऔरत ने पेट दिखा दिया।
अब तुम्हरा कलेजा ठंडा हुआ तो होगा।
अधिकारी कुछ न बोलकर पीछे हट गया। उसे हटना ही पड़ता।
अब लोग खौल रहे थे।

यहाँ संवेदनहीनता और पीड़ा का वह स्तर देखने को मिलता जहाँ मनुष्यता का अंतिम छोर होगा। बाद में उस युवक को सजा भी मिली और जहाज के मारिसस पहुचने पर पर उसे कोई देखा नहीं। इस उपन्यास में औपनिवेशिक शासन के जुल्म की पराकाष्ठा की गवाही करने वाले प्रसंग देखने को मिलते हैं। लेखक ने लिखा है कि– जहाज के अधिकारियों में मानवता मृत थी और इन भारतीयों के खेमें में मानवता बेबस थी। मानवता का मृत होने और बेबस होने के बीच यह कथा आरम्भ होती है, और एक सहज, सबल मानवीय समाज की स्थापना की आकांक्षा के साथ इस उपन्यास की कथा का विकास होता है। उपन्यास की भूमिका में धुरंधर जी उस रिपोर्ट का भी उल्लेख करतें हैं, जिसमें मारिसस में बसे जर्मन आदोल्फ़ दे प्लेवित्स ने लिखा है कि– शक्कर प्रतिष्ठानों में भारतीय मूल के लोगों की जानें ली जातीं हैं। बहु–बेटियों पर कहर टूटते हैं। भीषण मजदूरी के बदले मजदूरों के थैले में गोदाम से सडा अन्न डालकर उन्हें घर लौटाया जाता है।

यह उपन्यास वास्तव में उस वेदना का संचित रूप है जो प्रवासी भारतीयों के प्रति उस समाज में थी ही नहीं, जो तथाकथित सभ्य कहा और समझा जाता था। पथरीला सोना उपन्यास अगर लिखा नहीं जाता तो उस पीड़ा को शायद ही जमाना जान पाता जिसे हमारे प्रवासी भारतीयों ने भोग कर एक नया सूर्योदय किया। लेखक का समर्पण भी अपने आप में विशिष्ट है, उपन्यास की भूमिका में धुरंधर जी लिखते हैं– इस उपन्यास को थामने और इसके संवहन में मैं इतिहास के उन वट–वृक्षी लोगों का ऋणी हूँ, जो मृत्यु के उपरान्त आकाश में कहीं भी होंगे, मैंने मॉरिशस की धरती से इस बात के लिए उनका जब आह्वान कि तुम्हें लेकर इतने विस्तार से लिखना चाहता हूँ, तो उन्होंने लिखने का हौसला बढाया। विरले ही लेखक होंगे जो इतिहास के प्रति इतनी रूचि और लोगों के प्रति इतना भाव रखते होंगे कि उन्हें ना होने के बाद भी, उनके होने के अहसास से लिखते होंगे। धुरंधर जी उस गाथा को प्रस्तुत किया है, जिसने पुर्तगाली, डच, फ्रांसीसी और अंग्रेजी शासन के जुल्म को सहते हुए एक नया सूर्योदय किया।

भाव, भाषा की दृष्टि से उपन्यास विशिष्ट है। इसमें हिन्दी के साथ–साथ भोजपुरिया टोन भी देखने को मिलता है । विस्तृत औपन्यासिक फलक और इतिहास होने के कारण शिल्प के स्तर पर थोड़ी शिथिलता देखने को मिलती जो उपन्यास के व्यापकता और इतिहास बोध को दृष्टिगत रखते हुए सर्वथा उचित और प्रासंगिक है।

संदर्भ सूची

1. पथरीला सोना, खण्ड–1 (पृष्ठ–02)
2. पथरीला सोना, खण्ड–1 आत्मकथा (पृष्ठ–04)
3. सामाजिक यथार्थ और कथाभाषाः अज्ञेय, भूमिका
4. पथरीला सोना, खण्ड–1 (पृष्ठ–15)
5. पथरीला सोना, खण्ड–1 (पृष्ठ–17)